



संपादक की कलम से.....

साहित्य से समाज

गीता शर्मा

आज के भागदौड़ भरे डिजिटल युग में हम सूचनाओं के महासागर में तो गोते लगा रहे हैं, लेकिन साहित्य की उस गहराई से लगातार दूर होते जा रहे हैं जो कभी हमारे समाज की रीढ़ हुआ करती थी। यह चिंता केवल भाषा या विधा के खोने की नहीं है, बल्कि उस जीवन-दर्शन के लुप्त होने की है जिसे हम 'संस्कार' कहते हैं।

साहित्य केवल शब्दों का संग्रह नहीं, बल्कि समाज का दर्पण और मानवीय संवेदनाओं का संवाहक है। जब एक युवा प्रेमचंद की कहानियों या दिनकर की कविताओं से कटता है, तो वह केवल भाषा नहीं खोता, बल्कि सहानुभूति, धैर्य, नैतिकता और न्यायबोध जैसे उन गुणों को भी खो देता है जो उसे एक 'मनुष्य' बनाते हैं। आज की 'स्कॉलिंग' संस्कृति ने हमारे भीतर से गंभीर चिंतन और संवेदनशीलता को सोख लिया है।

साहित्य और संस्कारों का सीधा संबंध:

संवेदनशीलता का अभाव: साहित्य हमें दूसरों के दुखों को महसूस करना सिखाता है। इसके अभाव में समाज यांत्रिक और आत्मकेंद्रित हो

गया है।

भाषा की गिरावट: भाषा की शुद्धता और शालीनता संस्कारों की पहली सीढ़ी है। साहित्य से दूरी ने हमारी संवाद शैली को उथला और कई बार अभद्र बना दिया है।

सांस्कृतिक विस्मृति: हमारी जड़ें हमारे लोक साहित्य और कालजयी कृतियों में हैं। इनसे कटकर हम अपनी पहचान और गौरवशाली विरासत से भी दूर हो रहे हैं।

यदि हम चाहते हैं कि भावी पीढ़ी केवल 'साक्षर' न बने बल्कि 'सुसंस्कृत' भी हो, तो हमें साहित्य को घरों के ड्राइंग रूम और बच्चों के हाथ के गैजेट्स तक वापस लाना होगा। संस्कार किताबों की रटंत विद्या से नहीं, बल्कि उस रस और बोध से आते हैं जो केवल उत्तम साहित्य ही दे सकता है।